इक्कीसवीं शती के पहले दशक का उर्दू नाटक

डॉ. इशरत खान,
प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,गोवा विश्वविद्यालय.

नाटक, साहित्य की एक अत्यन्त मनोरंजक एवं आकर्षक विधा है। नाटक का उद्देश्य जीवन - मूल्यों और सामाजिक समस्याओं को अंकित करना है। नाटक, मंचित हुए बिना पूरा नहीं हो सकता।जो नाटक मंचित नहीं होगा, अधूरा रहेगा। उसके गुण-दोष स्पष्ट नहीं हो पायेंगे और न ही लिखने का उद्देश्य पूरा होगा।

यह बेहद खेद का विषय है कि उर्दू में न केवल नाटकों को बल्कि लोक से जुड़ी सभी विधाओं को वह सम्मान और स्थान नहीं मिल सका जो उन्हें दूसरी हिन्दुस्तानी भाषाओं को हासिल था, इसका कारण यह था कि आरम्भ में उर्दू नाटक का रिश्ता, उर्दू साहित्य से दूर-दूर का सा रहा। नाटक के रूप में जो कुछ लिखा जाता रहा, वह मंच पर दिखाए जाने के गर्ज से था। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रारम्भ के उर्दू नाटक की साहित्यिक हैसियत निचले स्तर की ही रही।

प्रारम्भ में जो उर्दू नाटक लिखे गए उनमें राष्ट्रीयता, देशप्रेम का स्वर ही मुखरित था। इनमें फिरंगी और हिन्दुस्तानी शासन प्रणाली की तुलना 'नाना साहिब अलबर्ट विल (उमराव अली) आदि नाटकों में अंग्रेजों के अत्याचार दिखाए गये हैं। आगा खाँ के देहान्त के बाद उर्दू नाटक को एक झटका-सा लगा। प्रगतिशील लेखकों और उनसे प्रभावित होनेवालों ने उर्दू-नाटक को नया जीवन और उर्दू नाटककारों को नई चेतना प्रदान की।अली सरदार जाफरी रव्वाजा अहमद अब्बास, इस्मत चुगताई, मंटो, राजिन्दर सिंह बेदी, हबीब तनवीर, वामिक जा-नपुरी, रजिया सज्जाद जहीर, मुहम्मद हसन से होते हुए शमीम हनफी आदि प्रगतिशील उर्दू नाटककारों की विस्तृत सूची है।

आधुनिक काल में इम्तियाज़ अली ताज का 'अनारकली', हबीब तनवीर का 'आगरा बाज़ार' एस. एम. मेंहदी' का 'गालिब कौन है', असगर वजाहत का 'जिसने लाहौर नहीं देखा' तथा जावेद सिद्दीकी का 'तुम्हारी अमृता' आदि उर्दू में लिखे गए कामयाब नाटक रहे हैं।

आज़ादी के बाद उर्दू नाट्य-लेखन में महिलाओं की भागीदारी देखकर प्रसन्नता होती है। उर्दू में देश की अन्य भाषाओं की अपेक्षा ज़्यादा महिला नाटककार मौजूद हैं। इनमें इस्मत चुगताई के 'धानी बांके' तीन अनाड़ी और शैतान' क़ाबिले जिक्र है। इसके अतिरिक्त सालिहा, आबिद हुसैन, शीला भाटिया आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं।

इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के नाटकों की विशेषता यह है कि उसमें समकालीन समाज की समस्याओं का अंकन बेबाकी से किया गया है। इस दशक प्रमुख नाटककार 'हबीब तनवीर' शाहिद अनवर और रशीद अन्जुम हैं।

उर्दू नाट्य-लेखन में हबीब तनवीर का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे नाटककार के साथ ही रंगकर्मी भी हैं। वैसे नाट्य-साहित्य में रंगकर्मी के रूप में उनकी एक खास पहचान बनी है। उन्होंने हिन्दी, उर्दू, मराठी, गुजराती सभी भाषाओं के नाटकों का सफल मंचन किया है। हबीब जी द्वारा लिखे गए नाटकों की संख्या अधिक है लेकिन इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में भी आपने अनेक नाटक लिखे हैं। इनमें जहरीली हवा (2002), वेणी संहार (2002), राजरक्त (2006) आदि नाटक उल्लेखनीय कहे जा सकते हैं। 'जहरीली हवा' नाटक,

भोपाल की गैस-कांड की घटना पर आधारित है। उस घटना का प्रभाव अभी भी भोपाल की जनता पर हावी है।वे उस घटना को भूलाए नहीं भूलते हैं।

इस नाटक का हिन्दी अनुवाद राहुल वर्मा ने 2003 में किया।

हबीब तनवीर का राजरक्त नाटक रवीन्द्रनाथ टैगोर के उपन्यास राजारशी (....) और विसर्जन नाटक पर आधारित है। प्रस्तुत नाटक की पृष्ठभूमि धार्मिक एवं ऐतिहासिक हैं। इसके केन्द्र में त्रिपुरा का राजा गोविन्द माणिक है जिन्होंने पशु बलि पर प्रतिबन्ध लगाया था। लेकिन प्रजा की ओर से उदासीन रहते हैं, लेकिन जब एक लड़की हन्हसी राजा से पूछती हैं - क्या आप अपने व्यक्तिगत स्तर पर ही राज और धर्म की व्याख्या करते हैं और दुविधाग्रस्त हो जाते हैं। लड़की के इन प्रश्नों से राजा को मानसिक पीड़ा पहुँचती है। इसी के फलस्वरूप उसकी सोच में परिवर्तन भी आता है।

इसके साथ ही इस नाटक में दार्शनिक द्वन्द्व को भी दर्शाया गया है। उदाहरण के लिए रघुपति जयसिंह से कहता है कि - "यह विश्व अपराधों और निर्दोषों की हत्याओं से भरा हैं"। छोटी लड़की (हन्हसी) के ये शब्द इसकी गवाही देते हुए प्रतीत होते हैं - "इतना खून क्यों" इस दशक में हबीब जी ने जितने भी नाटक लिखे हैं, उनमें राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याएँ ही प्रमुख रही हैं।

शाहिद अनवर युवा रंगकर्मी हैं। ये मुख्यतया जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय छात्रों के नाट्य-दल बहरूप के संस्थापक एवं सतत सक्रिय सदस्यों में शामिल रहे हैं। आपने भारतीय एवं पाश्चात्य नाटकों के अनुवाद एवं रूपान्तरण भी किए हैं और इनका मंचन भी हो चुका है। कुछ अनुवादों के नाम इस प्रकार हैं बादल सरकार का तीसवीं शताब्दी अजगर वजाहत की कहानी नहीं चाहिए हमें का इसी नाम से नुक्कड़ नाट्य-रूपान्तर तथा श्मोएल अहमद की कहानी 'सिंगारदान' का नाट्य रूपान्तर किया है।

शाहिद अनवर का पहला नाटक सूपना का सपना (2002) में लिखा और खेला गया है। गैर-जरूरी लोग शीर्षक से इनके तीन नाटकों (गैर जरूरी लोग, सूपना का सपना, तो शेरनी ने कहा) का संग्रह उर्दू में 2004 तथा हिन्दी में 2005 में प्रकाशित हुआ।

'गैर-ज़रुरी लोग़' यूँ तो सआदत हसन मंटो की सुप्रसिद्ध कहानी 'टोबाटेक सिंह', 'पैरन', आखरी सैल्यूट' 'हतक', बाबू गोपीनाथ, छह कहानियों पर आधारित एक नाट्य-रूपान्तर ही है। 'गैर-जरूरी लोग का केन्द्र टोबाटेक सिंह का नीमपागल चरित्र बिशन सिंह है। हामिद जलाल, मंटो का भानजा और उसकाअदबी वारिस होने के साथ-साथ, वह कलनियों का सूत्रधार, स्वयं मंटो और कई जगह (जैसे माधो) दूसरे चरित्रों की भूमिका भी निभाता है। प्रस्तुत नाटक में वेश्याओं, गरीबों की दयनीय हालत को भी दर्शाया गया है।हामिद जलाल की मार्फत मंटो अपना मुल्क और उसमें अपनी जगह तलाशते हुए कहते हैं ..... "दरअसल मेरे मुल्क की वह आबादी जो मोटरकारों में घूमती है, मेरा मुल्क नहीं...मेरा मुल्क वह है जिसमें मुझ जैसे बल्कि मुझसे भी बदतर गुफलिस बसते हैं और मेरी मुश्किल यह है कि यह आबादी इधर भी है, और उधर भी है ..... इसलिए मेरे मुल्क का, मेरे अपने मुल्क का कोई नफ़शा नहीं।"

शायद इसीलिए बिशनसिंह के साथ-साथ इस नाटक के सभी पात्र गैर जरुरी लोग, नो मैंस लैंड के भीतर आ जाते हैं। इनके लिए न इस मुल्क में कोई जगह है न उस मुल्क में। विडम्बना यह कि दोनों मुल्कों की सरहदें सिकुड़ती जा रही हैं और नो मैंस लैंड का आकार बढ़ता जा रहा है। पूरा मंच अन्ततः नो मैंस लैंड (भूमि का मुख्य आधार) में बदल जाता हैं। लेकिन इसके बावजूद नाटककार को 'फैज़' की तरह यह उम्मीद है कि .....

हम देखेंगे,
लाज़िम है कि हम भी देखेंगे,
वह दिन के : जिसका वादा है,
जो लैह - ए- अज़ल में लिक्ख है।

जब जुल्मों -ओ-सितम के कोहे गिराँ,
रुई की तरह उड़ जाएँगे,
तब तख्त गिराए जाएंगे,
उठेगा अनहलुक का नारा,
जो मैं भी हूँ और तुम भी हो,
और राज करेगी खल्क -ए-खुदा,
जो मैं भी हूँ और तुम भी हो।

'सूपना का सपना' जिसे हबीब तनबीर 'सूपनवा का सपना' कहना ज़्यादा ठीक समझते है।इसमें ग्रामीण समाज का यथार्थ चित्रण किया गया है। जब गॉव कें सत्ताधारी, भोले-भाले ग्रामीणों पर अत्याचार करेंगे तो एक दिन उन ग्रामीणों में आएगा और वे इन शोषक शक्तियों के प्रति विद्रोह अवश्य करेंगे। इसको बाबू साहेब (सत्ताधारी व्यवस्था का प्रतिनिधित्व और सूपना (चेतना संपन्न ग्रामीण जनता का प्रतिनिधित्व) के माध्यम से स्पष्ट किया गया है। इसी के साथ नाटककार ने पुलिस तन्त्र की मक्कारी, बेईमानी, कमीनगी और क्रूरता का भी "पर्दाफाश" किया है।

(यह नाटक, चीन के रचनाकार लू शुन की कृति 'आ क्यू की सच्ची कहानी' से प्रभावित है।'तो शेरनी ऑफ द टाइगर) का अनुवाद है। इसमें, नाटककार ने यह दिखाने का प्रयत्न किया है कि आज इन्सानियत, मानव की अपेक्षा जानवरों में भी आ गई है, आज का सभ्य मानव, उनकी इन्सानियत और अच्छे कर्मो का बदला अपने, कुकर्मों एवं अत्याचारी स्वभाव से देता है अर्थात जानवर इन्सान हो गया है और इन्सान जानवर हो गया है। "प्रस्तुत नाटक में युद्ध का एक घायल फौज़ी, जिसे उसके साथी अकेला छोड़कर आगे निकल जाते हैं। वह अपनी जिजीविषा के बल पर आँधी-तूफान का सामना करता हुआ एक गुफा में जा पहुँचता है। वह गुफा एक शेरनी और दो बच्चों की है। पेट में पानी भरने से उसका एक बच्चा मर जाता है। शेरनी के थनों में दूध भरा हुआ है। वह फौजी को बच्चे की तरह दूध पिलाती है और चाट-चाट कर उसका घाव भी भरती है परन्तु राजनीतिक और सामाजिक नेता उससे अपना काम निकलवाकर शेरनी को अजायबघर या चिड़ियाघर में बन्द करके नुमाइश और मनोरंजन की चीज़ बनाकर छोड़ देते हैं। इस प्रकार इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में अनवर एक प्रखर राजनीतिक नाटककार के रूप में जाने-पहचाने जाते हैं.....

उर्दू में इस दशक के दूसरे प्रमुख नाटककार रशीद अन्जुम हैं। इन्होंने 2008 में एक ऐतिहासिक नाटक "संगरेज़ हवाएं" लिखा है। इस नाटक की शुरूआत बहरामगढ़ से होती है। वहाँ के नवाब शौक़तयार जंग के राज पर अंग्रेजों का हमला होता है, लेकिन उनको, अपने राज से नं कोई प्रेम है, और न कोई हौसला है, उनका बेटा सिकन्दर यार जंग क़ौम परस्त ताक़तों का हीरो बनकर उभरता है। अपने राज के प्रति वफादार एवं विश्वसनीय साथी अब्दुल्ला और विशम्भर सिंह, अपनी जान की बाज़ी लगाकर, इसका साथ देते हैं। यहाँ तक कि आखिरकार खुद नवाब शौकतयार जंग की सोच में भी बदलाव आता है। वह (सिकन्दर) अंग्रेजों से बहुत बहादुरी से लड़ता है लेकिन अन्त में जीत अंग्रेजों की होती है। इसका कारण खुद अपने ही लोग होते हैं। बादशाह की खुदगर्ज़ (स्वार्थी) बीवी 'जीनत महल' नमकहराम समधी मिर्जा इलाहीबख्श और हकीम अहसान अल्लाह और मुखबिरों की कारस्तानियाँ भी इसका कारण बन जाती हैं। अन्त में सिकन्दर यार जंग के साथी भी, इस जीवन संग्राम में उसका साथ छोड़ देते हैं8। सिकन्दर का प्रस्तुत कथन, इस नाटक का प्राणतत्व है -

"वह अंग्रेज़ी से नहीं हार सका, बल्कि खुद अपनों ने उसे, इस हालत तक पहुँचा दिया है।" नाटककार ने इस समय के भारत का यथार्थ चित्रण किया है। इसी के साथ उसने हिन्दुस्तानियों के पारस्परिक द्वेष, ईर्ष्या, दरबारी साजिश (षड्यन्त्र) मुखबिरी आदि विकृतियों पर व्यंग्य भी किया है।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि उर्दू भाषा में, नई पीढ़ी के प्रतिभावान नाटककार एवं रंगकर्मी उभर रहे हैं। उर्दू में महत्त्वपूर्ण रंगमंचीय नए प्रयोग करके ये इक्कीसवीं सदी के पहले दशक के नाट्यकर्म के प्रति